E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

पंचायती राज व्यवस्था का ऐतिहासिक स्वरूप : एक अध्ययन

डॉ. जयश्री त्रिवेदी

प्राध्यापक और विभागाध्यक्ष,

राजनीतिशास्त्र

शासकीय स्नातकोत्तर

महाविद्यालय, दतिया (म. प्र.)

पुष्पेंद्र धाकड़

शोध,छात्र राजनीति विज्ञान,

जीवाजी विश्वविद्यालय

ग्वालियर (म.प्र.)

Paper Rcevied date

05/08/2025

Paper date Publishing Date

10/08/2025

DOI

https://doi.org/10.5281/zenodo.17009077

IMPACT FACTOR

5.924

शोध-सार

पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण विकास, भारतीय संस्कृति एवं समाज का एक अभिन्न अंग रही है। चिरकाल से ग्रामीण क्षेत्र में न्याय, अनुशासन, शिक्षा, स्वास्थ्य और निर्माण कार्यों की व्यवस्था पंचायतों के हाथों में रही है। उस समय भाव, स्वभावलम्ब, वैदिक काल, बौद्ध काल एवं मुगलकाल तक इस देश में सम्बल पंचायत व्यवस्था कार्य करती रही। समय-समय पर इसके नामकरण, व्यवस्था, ढाँचा और कार्यप्रणाली में थोड़ा बहुत परिवर्तन या संशोधन होता रहा है। कई प्रमाण मिले हैं जिससे इस व्यवस्था की प्राथमिकता का बोध होता है। आज विश्व राजनीति में अधिनायकवाद, दलवाद और जातिवाद में प्रवेश हो रहा है। भारतीय गणतंत्र का समस्त देश में मानव अधिकार समानता, न्याय और समाजवाद को प्रसारित करते है । महिलाओं का राजनीति में अद्वितीय योगदान रहा है, उनकी बौद्धिक क्षमता का मूल्यांकन किया जा सकता है।

अतः आवश्यक है कि भारतीय नागरिक लोकतंत्र की दार्शनिक और समाजशास्त्रीय समस्या से परिचित लोकतंत्र की रक्षा के लिये तैयार रहें। बड़ी वेदना और तपस्या के बाद इस देश में स्वराज का दर्शन हुआ है । अतः क्षुद्र संतुष्टि और जातिवाद को तिलांजलि देकर लोकतंत्र और व्यापक न्याय का संपोषण अभिवांछित है, जिससे हमारे स्वराज्य की जड़ मजबूत हो सके ।

मुख्य बिन्दु :- :- कार्यप्रणाली, स्वभावलम्ब, वैदिक, समाजशास्त्रीय, संपोषण ।

साहित्य दृष्टि से पंचायती राज्य शब्द हिंदी भाषा के दो शब्दों में पंचायत और राज से मिलकर बना है जिसका अर्थ है पाँच जनप्रतिनिधियों के समूह का शासन। यह पाँच प्रतिनिधि हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा पाँचवा परमेश्वर

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

शब्दों को परिभाषित किया गया। इसके अनुसार पंचायत शब्द संस्कृत भाषा के ग्रंथों के अनुसार किसी आध्यात्मिक पुरुष सहित पाँच पुरुषों के समूह वर्ग के पंचायत के नाम से संबोधित किया जाता है । उपन्यास सम्राट और प्रसिद्ध कहानीकार मुंशी प्रेमचंद ने अपनी कहानी पंच परमेश्वर में भारतीय मानस की यह विचारधारा बड़े सटीक ढंग से व्यक्त की है ।

लोकतांत्रिक दृष्टि से पंचायती राज का अर्थ- पंचायत पंच + आयत दो शब्दों से मिलकर बना है, जिसका अर्थ पाँच सदस्यों की एक ऐसी संस्था से है जो गाँव के लोगों के द्वारा निर्वाचित होती है। सीधे शब्दों में पंचायतें लोकतांत्रिक विकेन्द्रीयकरण का एक रूप है। जिसमें प्रशासनिक एवं सत्ता के अधिकारों को केन्द्र से गाँव को हस्तांतरित किया गया है ।

पंचायतीराज व्यवस्था ने लोकतांत्रिक स्वरूप को विकसित किया,जिसका सम्बन्ध भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का सजीवन एवं साकार स्वरूप स्वतन्त्रता के पश्चात् ही दृष्टिगोचर हुआ, लेकिन इसकी परिकल्पना को स्वतन्त्र भारत की उपज कहना तर्क संगत प्रतीत नहीं होता। पंचायती राज की परिकल्पना, स्वरूप एवं उसके माध्यम से ग्रामीण विकास की अवधारणा आजकल की बात नहीं, अपितु इसका इतिहास वैदिक काल से भी पूर्व का है। भारत के प्राचीन इतिहास की पृष्ठभूमि के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में भी पंचायती राज का अस्तित्व था ।

वैदिककालीन राज्य पंचायतों के माध्यम से राज्य की क्रियाओं का कार्य संभालता था। उस दौरान ग्राम का प्रमुख ग्रामिणी होता था जो पंचायत का भी प्रमुख होता था । बौद्ध काल में ग्राम परिषदें थी, इन परिषदों का कार्य ग्राम भूमि, कर, लगान की व्यवस्था एवं शान्ति, सुरक्षा स्थापित करना था । मौर्य काल तक पंचायतों के कार्यक्षेत्र विस्तृत हुआ करते थे । चन्द्रगुप्त मौर्य के काल में ग्रामीण लोग पंचायतों में रूचि लिया करते थे। तत्कालीन नीतिज्ञ एवं राजनीति शास्त्र के ज्ञात चाणक्य ग्राम को राजनीति की इकाई के रूप में स्वीकार करते थे । (1)

चाणक्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र' में अनेक बार ग्रामिक शब्द का उल्लेख किया है जो ग्राम का प्रमुख हुआ करता था। पंचायत में ग्रामिक की मुख्य भूमिका होती थी। ग्राम पंचायतों में एक सार्वजनिक कोष होता था जिसमें किसानों से प्राप्त कर, लगान, दण्ड एवं जुर्माने से प्राप्त धन को संचित किया जाता था। पंचायती राज व्यवस्था के बारे में राजा हर्षवर्द्धन के शिलालेखों से जानकारी उसके शासन काल के बारे में होती है। दसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में दक्षिण में पंचायतें पूर्ण अस्तित्व में थीं। सम्पूर्ण शासन का कार्य - भार एक महासभा पर केन्द्रित होता था, जिसका आधार चुनाव प्रणाली होती थी। शासन की प्रमुख श्रृंखला के रूप में ज्ञात उस महासभा के सदस्यों को ग्रामीण लोगों द्वारा चुना जाता था। महासभा के सदस्यों से विभिन्न समितियों का निर्माण होता था । न्यायिक प्रक्रिया का दायित्व, उस काल में पंचायतों के पास ही होता था ।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

प्रारम्भिक आर्यों के काल में भी विकास की प्रमुख इकाई के रूप में ग्राम पंचायतों विद्यमान थीं। 5000 ई.पू. से 3500 ई.पू. तक वेदों में राज्य के विभिन्न कर्मचारियों की भूमिका के अन्तर्गत पंचायतों का उल्लेख मिलता है। उस समय राज्य में तीन अधिकारी हुआ करते थे। प्रथम पुरोहित, द्वितीय सेनापति एवं तृतीय अधिकारी ग्रामणी होता था। ग्रामणी ग्राम का अधिकारी एवं पंचायत का प्रमुख होता था। ग्राम ग्रामणी सैनिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करने में मुख्य भूमिका का निर्वहन करता था। ऐतरेय ब्राह्मण और शतपथ ब्राह्मण में भी ग्राम मुखिया के रूप में ग्रामणी का उल्लेख मिलता है, साथ ही इसे राजस्व संग्रह करने वाला एवं सैनिक अधिकारी के रूप में भी प्रदर्शित किया गया है। (2)

भारतीय इतिहास और सभ्यता का सबसे बड़ा वरदान यह है कि यहाँ के लोगों का स्थानीय भूमि के साथ गहरा लगाव रहा है। इस देश के निवासियों के जीवन और चिन्तन में भारत का एक सार्थक राजनीतिक इकाई के रूप में चित्र अभी भी धुँधला है। इसलिए इस बात का सदैव प्रयत्न करना है कि इस देश के निवासी भ्रम को ही अधिकांशतः अपनी इच्छाओं का केन्द्र बनाएँ। ग्रामीण समाज के लोगों का यह विचार कि भूमि का लगान पूरी तरह गाँव - पंचायत और पंचायत समिति को सुपुर्द कर दिया जाय क्योंकि बहुत ही घातक सिद्ध होगा। इससे गांव वालों की परम्परागत स्थानीय भक्ति और अधिक तीव्र होगी। गांव वालों को सीखना चाहिए कि देश की रक्षा का काम भी उनका कर्तव्य है।

पंचायतीराज व्यवस्था में कृषि व उद्योग को अधिक महत्वपूर्ण एवं सशक्त बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की समितियाँ और संस्तुति बनी। ग्रामीण परिवेश में रहने वाले अनुसूचित जाति एवं पिछड़ा वर्ग एवं सामान्य वर्ग महिलाओं की भागीदारी उन्हें अधिक सशक्त और जागरूक बनाया जा रहा है। जिससे पंचायतीराज व्यवस्था के माध्यम से वे अपनी जीवन शैली राष्ट्रीय के विकास में अपना सहयोग प्रदान करती है। (3)

इस काल के दौरान भी ग्राम पंचायतें हुआ करती थीं। उस अवधि में प्रशासन की सुविधा के लिए राज्य कई इकाइयों में विभाजित होता था। यह विभाजन दशमलव प्रणाली पर आधारित था। सबसे छोटी इकाई ग्राम था। इसके ऊपर दशग्राम, विशंतिग्राम, शतग्राम, सहस्त्र ग्राम और राज्य था और इनके अधिकारियों में ग्राम पंचायत के अधिकारी ग्रामिक एवं अन्य के क्रमशः विंशतीय, शतग्रामी अधिपति और राजा होते थे।

बौद्ध काल (600 ई.पू. से 400 ई.पू.) में ग्रामों की शासन व्यवस्था सुनिश्चित और सुसंगठित थी। सम्पूर्ण जनपद के शासन की इकाई ग्राम ग्राम के शासक को ग्रामयोजक कहते थे। ग्रामयोजक का पद बड़ा ही मामलों को सुलझाने का कार्य महत्वपूर्ण था। ग्राम सम्बन्धित सभी ग्रामयोजक के ऊपर था। वह ग्राम के अभियोगों का निर्णय करता था।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

मद्यपान, जुआ, पशु हिंसा जैसी दूषित प्रवृत्तियों को निषिद्ध करने का अधिकार उस को प्राप्त था। मादक वस्तुओं का क्रय-विक्रय उसकी आज्ञा या अनुमति पर ही सम्भव था, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं था कि ग्रामयोजक अपने क्षेत्र में स्वेच्छाचारी शासक बन बैठता था। उसके कार्यों के विरूद्ध राजा के पास अपील की जा सकती थी। (4)

राजा को आवश्यकतानुसार ग्राम शासन में संशोधन करने तथा ग्रामयोजक को अपदस्थ करने का अधिकार था। कृषि और व्यापार पर भी ग्रामयोजक के माध्यम से विशेष ध्यान रखा जाता था। पहले समूह को ग्राम कहते थे, लेकिन इसके बाद बहुत से लोग जब एक स्थान पर बस जाते थे तो उनकी सम्पूर्ण बस्ती को ग्राम या गाँव कहा जाने लगा था। खेतों पर किसानों का अधिकार था। किसान को अपनी सारी उपज का छठे से बारहवाँ हिस्सा राज्य को देना होता था। किसान ग्राम पंचायत की अनुमति के बिना अपने खेत दूसरे को नहीं बेच सकता था। ग्राम पंचायतों को ग्राम सभा कहा जाता था और इसका मुखिया ग्रामयोजक होता था। ग्रामयोजक का चुनाव सभा द्वारा होता था। उस दौरान गाँव सभी दृष्टियों से छोटे रूप में पूर्ण स्वावलम्बी प्रजातन्त्र था।

गुप्तकालीन समाज्य में भी ग्राम पंचायतों का उल्लेख मिलता है। शासन की सुविधा की दृष्टि से गुप्त साम्राज्य के प्रभाव निम्नांकित थे - सबसे बड़ा विभाग प्रान्त था जिसको देश या भुक्ति कहते थे। प्रान्तीय शासन याज्ञिक, योगपति, गोपा, उपरीक महाराज और राज स्थानीय कहलाते थे। प्रान्तों से छोटा विभाग प्रदेश और इससे छोटा विभाग विषय होता था जो जिले के समकक्ष था। विषयों के ऊपर विषपति, कुमारामात्य अथवा महाराज शासन करते थे। (5)

शासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम होती थी जिसका मुख्य अधिकारी ग्रामिक, महत्तर अथवा भोजक होता था। पुष्यभूति वंश और काव्य कुदज साम्राज्य के बारे में हर्षचरित में ग्रामीण शासन व्यवस्था की उत्कृष्टता का उल्लेख मिलता है। स्थानीय शासन में नगर शासन का अस्तित्व नहीं था अपितु अपने सम्पूर्ण प्रभाव से ग्राम पंचायतें ही शासन की बागडोर संभालती थीं। तत्कालीन उत्कीर्ण लेखों के अनुसार ग्रामसभा का प्रमुख महत्तर या ग्रामिक होता था जो एक सरकारी अधिकारी होता था। उसके अधीनस्थ कई कर्मचारियों की व्यवस्था होती थी।

राजपूत काल में ग्राम पंचायतों का महत्व घट गया था। उन पर भी सामन्तों की अधिकार सत्ता छा गई। ग्राम शासन में दक्षिण भारत जितना संगठित था, उतना उत्तर भारत नहीं था। राज्य के विशाल होने पर तत्कालीन शासन प्रान्तों, जिलों, अधिष्ठानों और ग्रामों में विभक्त होता था। इस दृष्टि से शासन पद्धति एवं गुप्त कालीन शासन पद्धति के आधार पर ही थी, परन्तु शासन के विकेन्द्रीकरण की भावना पर आधारित होने के कारण केन्द्रीय शक्ति को सदैव खतरा बना रहता था। सामन्तगण बहुधा केन्द्र से स्वतंत्र होने की चेष्टा करते रहते थे।

वास्तविक रूपों में ग्रामीण महासभा पूर्णतः विकसित एवं संगठित शासन प्रणाली थी जो पूर्ण आन्तरिक स्वतन्त्रता का अधिकार रखती थी। गाँव की भूमि पर उसे पूरा अधिकार था। महासभा गाँव के उपयोग के लिए नई भूमि प्राप्त कर

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

सकती थी । धार्मिक कार्यों के लिए बेच भी सकती थी । महासभा ही भूमिकर वसूल करती थी कर वसूली से प्राप्त धन भूमि के रूप में निधियों या धरोहरों की ट्रस्टी होती थी । स्थानीय अपराधों के बारे में न्याय करने का महासभा को पूर्ण अधिकार प्राप्त था। ग्राम महासभा मठों के माध्यम से संस्कृति एवं तमिल भाषा और साहित्य की शिक्षा का प्रबन्ध करती थी। गाँवों की रक्षा, सड़क, सिंचाई, मनोविनोद की व्यवस्था का सम्पूर्ण दायित्व ग्रामसभा के ऊपर होता था। सरकारी अधिकारी ग्राम सभाओं में कार्य संचालक और लेखे-जोखे का निरीक्षण करते थे। ग्राम में होने वाले गबन, चोरी और असावधानी के लिए राज्य की ओर से कठोर दण्ड की व्यवस्था थी ।

पंचायतों की ऐतिहासिक सुदृढ़ पृष्ठभूमि के अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता। भारत में प्राचीन समय नहीं अपितु मुगल एवं ब्रिटिश शासन काल में भी पंचायतों का स्वरूप परिलक्षित होता था । सम्पूर्ण कालावधि में पंचायत प्रणाली का एकमात्र मूलभाव ग्रामों को स्वायत्तता प्रदान करना रहा है। इसी स्वायत्तता के फलस्वरूप भारत के राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में पंचायतों की भूमिका प्रमुख रही है।

ब्रिटिश शासन काल में भारत की प्राचीन सुदृढ़ शासन प्रणाली को तहस नहस करने में सर्वप्रथम पंचायत व्यवस्था को चुना गया, परन्तु यह सुदृढ़ शासन प्रणाली टूटी नहीं और उसका स्वरूप बिरादरी ने ले लिया, लेकिन इसके बाद विकास के मूल में अंग्रेजों ने पंचायत के महत्व को समझा और सन् 1920 ई. में सभी प्रान्तों में ग्राम पंचायत अधिनियम पारित कर उसे अत्यल्प अधिकारी के साथ क्रियान्वित किया गया ।

अंग्रेजी शासन प्रणाली में पंचों का जनता द्वारा चुनाव न होकर वे सरकार द्वारा मनोनीत किये जाते थे। उन्हें न्यायिक अधिकारी भी नहीं सौंपे गये थे। पंचायती राज की स्थापना के मूल में अंग्रेजों का लक्ष्य कुछ भी रहा हो पर वे इसे शासन का सुदृढ़ संगठन अवश्य मानते थे ।

सन्दर्भ सूची

1. गुप्ता बीना, पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका, संस्करण 2017 जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर पृ. 03

2. अल्टेकर ए. एस. द वण्डर देट वाइज इण्डिया

3. पद्मा रामचंद्रन, भारत में लोकप्रशासन, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, दिल्ली, संस्करण 2011, पृ. 9

4. गुप्ता माधव प्रसाद, मनरेगा, पंचायतीराज एवं जनजातिय विकास, रावत पब्लिकेशन, संस्करण 2016, पृ. 36

5. वीर गोतम, पंचायतीराज व्यवस्था ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण 2012, पृ. 53-54